बिहार राज्य एवं एक अन्य

बनाम

राँची जिला समता पार्टी एवं एक अन्य

19 मार्च, 1996

[के. रामास्वामी, एस. पी. भरुचा एवं

के. एस. परिपूर्णन, न्यायाधीशगण]

भारत का संविधान, 1950 : अनुच्छेद 136 एवं 226 — सप्तम अनुसूची — सूची I — प्रविष्टि 80।

दिल्ली विशेष पुलिस अधिनियम, 1946 : धारा 6।

बिहार पशुपालन विभाग — शिक्षा, सहयोग एवं मत्स्य विभाग — सार्वजनिक धन की बड़े पैमाने पर गबन, कपटपूर्ण संव्यवहार तथा लेखाओं का कूटरचना — राज्य पुलिस द्वारा अन्वेषण — अनुच्छेद 226 के अधीन शक्ति का प्रयोग करते हुए उच्च न्यायालय द्वारा राज्य सरकार की सहमति के बिना केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा अन्वेषण का निर्देश — राज्य पुलिस पर आक्षेप न लगाने, अपितु सार्वजनिक प्रशासन में भ्रष्टाचार की जाँच कराने का निर्देश — धारित किया गया कि दिया गया निर्देश न्यायोचित एवं उपयुक्त है तथा अनुच्छेद 136 के अधीन किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं — उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्देश में यह कहते हुए संशोधन कि घोटाले में सम्मिलित सभी व्यक्तियों से विधि के अनुसार निपटा जाए — धारित किया गया कि केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा किया जाने वाला अन्वेषण पटना उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की समग्र देखरेख में होगा — यह प्रश्न कि क्या उच्च न्यायालय संबंधित राज्य की सहमति के बिना केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा अन्वेषण का निर्देश दे सकता है — इस पर विचार नहीं किया गया क्योंकि इस संबंध में संदर्भ पहले से ही संविधान पीठ के समक्ष लंबित था।

दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकार : 1996 का दीवानी अपील संख्या 5177 इत्यादि।

दिनांक 11.3.96 के निर्णय एवं आदेश से, जो पटना उच्च न्यायालय द्वारा {1996 का दीवानी रिट क्षेत्राधिकार वाद संख्या 459} में पारित किया गया — आर।

सोली जे. सोराबजी, एफ. एस. नरीमन, पी. पी. राव, शांति भूषण, अरुण जेटली, ओ. पी. शर्मा, राजीव धवन, रमेश्वर प्रसाद, सशी अनुग्रह, बी. बी. सिंह, जमशेद बे, प्रशांत भूषण, मनींदर सिंह, प्रतिभा एम. सिंह, रवि शंकर प्रसाद, राकेश प्रसाद, सुशील कुमार मोदी, सुश्री ननिता शर्मा, रणजी थॉमस, प्रशांत चौधरी, पी. के. शाही, प्रमोद कुमार, गोपाल सिंह तथा सुश्री विमला सिन्हा — उपस्थित पक्षकारों के लिए।

न्यायालय द्वारा निम्नलिखित आदेश पारित किया गया :

अनुमति प्रदान की जाती है।

दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना गया।

विशेष अनुमति द्वारा दायर ये अपीलें पटना उच्च न्यायालय की खंडपीठ द्वारा {1996 का दीवानी रिट क्षेत्राधिकार वाद संख्या 459} एवं संबंधित प्रकरणों में दिनांक 11 मार्च, 1996 को पारित निर्णय से उत्पन्न हुई हैं। उच्च न्यायालय के आक्षेपित निर्णय में वर्णित सभी तथ्यों का विवरण देना आवश्यक नहीं है। इतना कहना पर्याप्त है कि बिहार राज्य के पशुपालन विभाग में सार्वजनिक धन की लगभग 500 करोड़ रुपये की राशि तक का बड़े पैमाने पर गबन, कपटपूर्ण संव्यवहार तथा लेखाओं का कूटरचना प्रकाश में आया। यह घटनाएँ वर्ष 1977-78 से 1995-96 के दौरान घटित हुईं। शिक्षा, सहयोग तथा मत्स्य विभागों में भी इसी प्रकार की स्थिति विद्यमान थी। सभी अधिवक्ताओं द्वारा यह स्वीकार किया गया कि गहन अन्वेषण किया जाना आवश्यक है। दोनों पक्षों के अधिवक्ताओं के बीच एकमात्र विवाद यह है कि क्या उच्च न्यायालय अनुच्छेद 226 के अधीन अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए राज्य पुलिस से अन्वेषण हटाकर उसे केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो को सौंप सकता था।

राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री एफ. एस. नरीमन ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि संविधान की सप्तम अनुसूची की सूची । की प्रविष्टि 80 तथा दिल्ली विशेष

पुलिस अधिनियम, 1946 (1946 की अधिनियम 26) की धारा 6 के कारण, संबंधित राज्य सरकार की सहमति के बिना राज्य में घटित किसी अपराध का अन्वेषण राज्य पुलिस के अतिरिक्त कोई अन्य अन्वेषण अभिकरण नहीं कर सकता। अनुच्छेद 226 के अधीन शक्ति का प्रयोग करते समय उच्च न्यायालय को इस सीमा को ध्यान में रखना चाहिए था। यह सीमा इस न्यायालय पर, जो संविधान के अनुच्छेद 142 के अधीन पूर्ण न्याय करने की शक्ति का प्रयोग करता है, लागू नहीं होती। अतः उच्च न्यायालय द्वारा केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो को सार्वजनिक धन के गबन, बड़े पैमाने पर दुरुपयोग, अभिलेखों की कूटरचना एवं विनाश आदि के आरोपों की जाँच का निर्देश देना विधि की दृष्टि से सही नहीं था। विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री पी. पी. राव ने यह दलील दी कि राज्य सरकार ने अन्वेषण आरंभ करने में कोई विलंब नहीं किया। जैसे ही यह विषय मुख्यमंत्री के संज्ञान में आया, उन्होंने तत्परता से कार्रवाई की, दोषी अधिकारियों को निलंबित किया तथा आवधिक प्रतिवेदन प्रस्तुत करने हेतु जाँच का गठन किया। श्री राव ने प्रस्तुत किया कि राज्य किसी भी भ्रष्ट अधिकारी को अभियोजन से या विभागीय कार्यवाही से बचाने का प्रयास नहीं करेगा। तत्पर कार्रवाई से यह सिद्ध होता है कि राज्य सरकार की मंशा उचित अन्वेषण कराने की थी। राज्य पुलिस के विरुद्ध कोई आरोप नहीं था। उच्च न्यायालय राज्य पुलिस द्वारा किए जा रहे अन्वेषण पर नियंत्रण एवं पर्यवेक्षण बनाए रख सकता था। इसके स्थान पर उसने राज्य पुलिस की वैधानिक शक्ति को उससे वंचित कर केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो को सौंप दिया, जिससे संविधान के अधीन शक्तियों के वितरण में असंतुलन उत्पन्न हुआ। विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री सोली जे. सोराबजी ने सभी दलीलों का समर्थन करते हुए यह प्रस्तुत किया कि यह शक्ति भारत शासन अधिनियम, 1935 की प्रविष्टि 39 से उद्भूत है तथा राज्य पुलिस को इस शक्ति से वंचित नहीं किया जा सकता। राज्य सरकार की सहमति के बिना उच्च न्यायालय द्वारा केन्द्रीय अभिकरण से अन्वेषण का आदेश नहीं दिया जा सकता था।

इसके विपरीत, उत्तरदाताओं की ओर से नेतृत्व कर रहे विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री शांति भूषण ने यह तर्क दिया कि उच्च न्यायालय की शक्ति असीमित है, यद्यपि उसके प्रयोग पर स्व-निरोपित सीमाएँ हैं। राज्य प्रशासन के भीतर हुए कपटपूर्ण संव्यवहारों की व्यापकता को देखते हुए, उनका अन्वेषण किसी स्वतंत्र अभिकरण द्वारा किया जाना आवश्यक है तथा दोषी अधिकारियों को दंडित किया जाना चाहिए। यदि अन्वेषण स्वतंत्र अभिकरण द्वारा किया जाए तो जनविश्वास सर्वाधिक रूप से सुनिश्चित होगा। केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के लिए न तो किसी निर्दोष व्यक्ति को झूठा फँसाने का और न ही किसी वास्तविक अपराधी को बचाने का कोई कारण है। अतः लोकतांत्रिक व्यवस्था में, जब प्रशासन पर संदेह की छाया पड़ जाती है, तब किसी स्वतंत्र अभिकरण द्वारा अन्वेषण कराया जाना उपयुक्त होगा। इसलिए उच्च न्यायालय ने अनुच्छेद 226 के अधीन अपने विवेकाधीन अधिकार का प्रयोग करते हुए, राज्य द्वारा ही दिए गए अनुमान के अनुसार 500 करोड़ रुपये से अधिक के इन कपटपूर्ण संव्यवहारों की जाँच केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो से कराने का उचित निर्देश दिया। विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री अरुण जेटली ने राज्य पुलिस की ओर से अन्वेषण तथा उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर दोषी अधिकारियों के विरुद्ध आरोप-पत्र प्रस्तुत करने में हुई निष्क्रियता की आलोचना की, जबकि इस संबंध में आयकर विभाग की सूचना राज्य की सतर्कता आयोग के माध्यम से उपलब्ध थी। विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री राजीव धवन ने जनविश्वास के आधार पर निर्णय का समर्थन किया तथा विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री ओ. पी. शर्मा ने भी वही दृष्टिकोण व्यक्त किया।

इन तर्कों के आलोक में, विचारार्थ प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि क्या यह न्यायालय उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश में हस्तक्षेप करने के लिए न्यायोचित होगा। अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालय की उस शक्ति की सीमाएँ, जिसके अंतर्गत वह संबंधित राज्य की सहमति के बिना केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा अन्वेषण का निर्देश दे सकता है, इस न्यायालय की पाँच न्यायाधीशों की संविधान पीठ के समक्ष विचाराधीन संदर्भ का विषय हैं

(यह संदर्भ 1985 की रिट याचिका संख्या 531-36 में दिनांक 10 मार्च, 1989 के आदेश द्वारा किया गया था)। अतः राज्य की सहमति के बिना अपराधों की जाँच हेतु केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो को निर्देश देने के संबंध में अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालय की शक्ति की सीमाएँ पहले से ही इस न्यायालय के समक्ष विचाराधीन हैं और उन पर निर्णय किया जाएगा। दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत सभी तर्कों पर संविधान पीठ द्वारा विचार कर उनका निपटारा किया जाएगा।

अतः एकमात्र प्रश्न यह रह जाता है कि क्या संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप किया जाना उपयुक्त है। जनहित याचिका में अनुच्छेद 226 के अधीन शक्ति का प्रयोग किसी राजनीतिक दल या व्यक्तियों के समूह को लाभ पहुँचाने के लिए नहीं किया गया था, जैसा कि अपीलकर्ताओं के अधिवक्ताओं ने आशंका व्यक्त की। न ही इसका उद्देश्य राज्य पुलिस पर आक्षेप लगाना था। इसका उद्देश्य सार्वजनिक प्रशासन में भ्रष्टाचार, नौकरशाही द्वारा दुराचार, शासकीय अभिलेखों की कूटरचना तथा सार्वजनिक धन के दुरुपयोग की जाँच ऐसे स्वतंत्र अभिकरण से कराना था, जो जनविश्वास अर्जित कर सके। अतः हमारा मत है कि उच्च न्यायालय द्वारा दिया गया निर्देश न्यायोचित एवं उपयुक्त प्रतीत होता है तथा इसमें वास्तविक हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

अब यह प्रश्न शेष रहता है कि क्या उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्देश में किसी प्रकार का संशोधन आवश्यक है। श्री नरीमन द्वारा यह इंगित किया गया कि राज्य पुलिस पहले ही विभिन्न व्यक्तियों के विरुद्ध 40 प्राथमिकी दर्ज कर चुकी है, 44 अपराधियों को गिरफ्तार किया गया है तथा 239 व्यक्तियों की संपत्तियाँ कुर्क की गई हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि इन अपराधों में सम्मिलित सभी व्यक्तियों की पहचान की जानी आवश्यक है। न केवल उपर्युक्त सभी व्यक्तियों से, बल्कि अन्य सभी सम्मिलित व्यक्तियों से भी विधि के अनुसार निपटा जाना चाहिए। यह संशोधन किया जाता है।

हम यह भी अभिमत व्यक्त करते हैं कि केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो द्वारा किए जाने वाले अन्वेषण पर राज्य की आशंकाओं को दूर करने हेतु, यह अन्वेषण पटना उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के समग्र नियंत्रण एवं पर्यवेक्षण में होना चाहिए। अन्वेषण से संबद्ध केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो के अधिकारी, संबंधित आपराधिक न्यायालय के अतिरिक्त, समय-समय पर अन्वेषण की प्रगति के संबंध में पटना उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश को सूचित करेंगे तथा यदि अन्वेषण के संचालन के संबंध में किसी निर्देश की आवश्यकता होगी, तो वे उनसे प्राप्त कर सकेंगे। माननीय मुख्य न्यायाधीश स्वयं की अध्यक्षता वाली पीठ के समक्ष निर्देश हेतु विषय सूचीबद्ध कर सकते हैं अथवा किसी अन्य उपयुक्त पीठ का गठन कर सकते हैं। अन्वेषण पूर्ण होने एवं प्रतिवेदन अंतिम रूप से तैयार होने के पश्चात, जैसा कि उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने आक्षेपित निर्णय में संकेत किया है, शीघ्र अनुवर्ती कार्रवाई की जाएगी। उच्च न्यायालय एवं राज्य सरकार, मामलों का शीघ्र निपटारा सुनिश्चित करने हेतु पर्याप्त संख्या में विशेष न्यायाधीशों की नियुक्ति में सहयोग करेंगे, जिससे कोई साक्ष्य नष्ट न हो।

उच्च न्यायालय की खंडपीठ द्वारा अनुच्छेद 54 में दिया गया वह निर्देश, जिसके अनुसार पहले से संस्थित मामलों में राज्य पुलिस द्वारा किया जा रहा अन्वेषण स्थगित रहेगा, संशोधित किया जाता है। अब संपूर्ण अन्वेषण उपर्युक्तानुसार केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो को सौंपा जाता है। केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो को निर्देश दिया जाता है कि वह राज्य पुलिस द्वारा अब तक किए गए अन्वेषण, जिसमें उपर्युक्त प्राथमिकी, गिरफ्तारियाँ एवं कुर्कियाँ सम्मिलित हैं, को अपने अधीन लेकर उनका उपयुक्त रूप से निपटारा करे।

अपीलें तदनुसार निस्तारित की जाती हैं। व्यय के संबंध में कोई आदेश नहीं।

टी. एन. ए. अपीलें निस्तारित।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।